राजेन्द्रन और अन्य

बनाम

शंकर सुंदरम और अन्य

(सिविल अपील सं. 802/2008)

30 जनवरी, 2008

[न्यायाधिपति एस. बी. सिन्हा और हरजीत सिंह बेदी]

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-ओ. 38 आर. 5- निर्णय से पूर्व कुर्की-साझेदारी फर्म एवं उसके भागीदारों के लिए, उनके विरूद्ध आवेदन को इस आधार पर चुनौती दी गई कि न तो ऋणी उक्त फर्म में भागीदार था और न ही उक्त ऋण भागीदारी फर्म के लाभ के लिए लिया गया था। निष्कर्षः सुसंगत समय में वे सभी भागीदार थे तथा वादी अपने दावे को फर्म तथा उसके भागीदारों के विरुद्ध प्रवर्तित कर सकता है- दावा डिक्री होने की सूरत में स्वयं के अधिकारों को सुरक्षित रखने हेतु ऋणदाता ने कुर्की के लिए आवेदन दायर किया - अदालत को इस स्तर पर तर्को की शुद्धता पर विचार किए बिना मात्र तथ्यों पर, प्रथम दृष्टया राय बनानी थी- सुरक्षा प्रदान करने पर भागीदार को किसी गंभीर रूप से पूर्वाग्रहित नहीं होंगे, इस

प्रकार, अनुच्छेद 136 के तहत हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है- भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 136-साझेदारी अधिनियम, 1932.

फर्म प्रतिवादी संख्या-1 के अपीलार्थी-प्रतिवादी सं 4 लगायत 7 भागीदार थे। प्रतिवादी नं. 3 भी उक्त फर्म के भागीदार थे । यह आरोप लगाया गया था कि प्रबंध भागीदार प्रतिवादी नं २, ने धोखाधड़ी से वादी-प्रत्यर्थी से व्यक्तिगत गारंटी पर ऋण प्राप्त किया था । प्रतिवादी संख्या-1 के नाम पर चेक जारी किया गया था। वादी-प्रत्यर्थी ने राशि की वसूली हेतु सभी प्रतिवादियों के विरुद्ध आदेश 38 नियम 05 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत आवेदन प्रस्तुत किया था। चूंकि प्रतिवादी नं. 2 प्रतिवादी सं. 03 लगायत 08 से मिलीभगत कर ऋण प्राप्त किया था ना कि साझेदारी के लाभ के लिए। अतः उच्च न्यायालय ने आवेदन को खारिज किया। पीड़ित वादी द्वारा हस्तगत अपील दायर की गई जिसे स्वीकार कर लिया गया।

अपीलार्थी/उत्तरदाताओं ने यह तर्क दिया कि वादी-प्रत्यर्थी से ऋण प्राप्त करने हेतु प्रतिवादी संख्या-2, 3 और 8 ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई; कि एक प्रतिवादी संख्या 2 को फर्म का प्रबंध भागीदार कहा गया था, जो वह नहीं था; कि केवल प्रतिवादी संख्या 3 प्रतिवादी संख्या 2 का बेटा एक भागीदार था; और यह कि कथित ऋण वादी द्वारा बिना पता लगाए कि उक्त फर्म के भागीदार कौन हैं।

याचिका खारिज करते हुए न्यायालय द्वारा यह निर्णय दिया गया,

निष्कर्ष 1.1 फर्म केवल तभी बाध्य होगी जब साझेदारी अधिनियम, 1932 में निहित सीमाओं के अधीन फर्म के एक भागीदार द्वारा लेन-देन किया जाता है। [पैरा 9] [212-जी]

1.2 ऋण की राशि एक चेक द्वारा दी गई थी। उक्त चेक साझेदारी फर्म के नाम पर तैयार किया गया था। अपीलार्थी भागीदार थे, यद्यपि संबंधित समय पर उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के समक्ष यह दिखाने का प्रयास किया गया था कि तत्समय अपीलार्थी भागीदार नहीं थे क्योंकि वे सन् 2001 में साझेदारी फर्म से सेवानिवृत्त हो चुके थे तथा पक्षों के बीच लेन-देन वर्ष 2000 का है, प्रथम दृष्टया अपीलार्थियों के दायित्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था। [पैरा 11] [214-ए, बी, सी]

1.3 निर्णय से पूर्व कुर्की के लिए वादी द्वारा आवेदन दायर किया गया था ताकि दावा डिक्री होने की स्थिति में उसके हितों की रक्षा हो सके । ऐसी स्थिति में, न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXXVIII नियम 5 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया गया। पक्षों द्वारा उठाई गई सभी दलीलों की शुद्धता में जाने की आवश्यकता नहीं है। प्रतिवादी सं 2, 3 और 8 के द्वारा उठाई गई आपत्तियों को मुकदमे की सुनवाई के दौरान सुना गया। मुकदमे में शामिल राशि को ध्यान में रखते हुए वादी

अपने हितों को सुरक्षित करने का हकदार है। चूंकि फर्म के नाम पर एक चेक जारी किया गया था तथा अपीलार्थी उक्त फर्म के भागीदार हैं। फर्म के एक भागीदार द्वारा वचनपत्र निष्पादित किया गया था। इस प्रकार, साझेदारी अधिनियम के तहत, प्रथम दृष्टया, वादी अपने हितों को न केवल फर्म परन्तु उसकी भागीदारों के विरुद्ध भी प्रवर्तित कर सकता है। [पैरा 12,13 और 14] [214-डी, एफ, जी, एच; 215-ए]

1.4 चूंकि मामले के किसी भी दृष्टिकोण से, अपीलार्थी द्वारा प्रतिभूति प्रदान करने से किसी भी रूप से पूर्वाग्रहग्रस्त नहीं होते हैं, अतः भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय द्वारा अपने क्षेत्राधिकार का उपयोग किया जाना उचित नहीं पाया जाता है । [पैरा 15] [215-बी]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं. 802/2008

मद्रास उच्च न्यायालय के ओ. एस. ए. No.108/2003 में 27.2.2004 दिनांकित निर्णय और आदेश से।

के. राममूर्ति, कवलजीत कोचर, ऋषि दीवान और कुसुम चौधरी अपीलार्थीगण के लिए।

उत्तरदाताओं के लिए अमित शर्मा और बी. वी. अनुपम लाल दास।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था

न्यायाधिपति एस.बी.सिन्हा

1. अनुमति स्वीकृत।

2. यहां अपीलार्थी मुकदमे में प्रतिवादी संख्या 4 से 7 थे। वादी/उत्तरदायी नंबर 1 ने उनके और चार अन्य के विरूद्ध मुकदमा दायर किया। वे निश्चित रूप से प्रतिवादी नंबर 1 फर्म, मैसर्स ए.आर. एएस और पीवीपीवी जो कि साझेदारी अधिनियम, 1932 के तहत पंजीकृत हैं, के भागीदार हैं । प्रतिवादी नंबर 3 पी. शंकर (यहां प्रतिवादी नंबर 4) भी उक्त फर्म में भागीदार थे।

3. कथित तौर पर, प्रतिवादी नंबर 2, पी.वी. पुरूषोत्तम (यहां प्रतिवादी नंबर 3), जिसे उक्त फर्म के प्रबंध भागीदार के रूप में वर्णित किया गया है, ने वादी से धोखाधड़ी से अग्रिम राशि प्राप्त की, जिसके लिए प्रतिवादी नंबर 2 द्वारा एक व्यक्तिगत गारंटी प्रस्तुत की गई थी। निर्विवाद रूप से 50 लाख रु. की राशि का चेक प्रतिवादी नंबर 1 के नाम पर जारी किया गया था।

4. वादी/उत्तरदायी द्वारा 70,30,000/- रुपये की राशि की वसूली बाबत 20% प्रति वर्ष की दर से ब्याज के साथ उपरोक्त मुकदमा दायर किया, जिसमें आरोप लगाया गया कि सभी प्रतिवादी संयुक्त और अलग-

अलग रूप से उत्तरदायी थे। वादी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXXVIII नियम 5 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था।

5. अपीलार्थीओं ने अपने लिखित बयान में अन्य बातों के साथ-साथ यह तर्क भी दिया कि चूंकि प्रतिवादी संख्या 3 और 8 के साथ की गई मिलीभगत से प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा अग्रिम रूप से लिए गए 50 लाख रुपये का उपयोग साझेदारी फर्म के लाभ के लिए नहीं किया गया था, यहां अपीलार्थीओं के विरूद्ध कुर्की का कोई आदेश जारी नहीं किया जा सकता है। अपीलार्थीओं के उक्त तर्क को उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपने आदेश दिनांक 10 दिसंबर, 2002 द्वारा यह कथित करते हुए स्वीकार किया कि :-

> "प्रतिस्पर्धी प्रतिवादियों द्वारा पार्टनरशिप डीड दिनांक 01-4-1996 की प्रतिलिपि टाइप किए गए सेट में दाखिल की गई है। इसके अवलोकन से स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि दूसरा प्रतिवादी पहली प्रतिवादी फर्म में भागीदार नहीं था। इसके अलावा, वादी ने यह दिखाने के लिए कोई रिकॉर्ड भी दाखिल नहीं किया था कि दूसरा प्रतिवादी पहले से ही पहली प्रतिवादी फर्म में भागीदार था और उधार भी केवल फर्म के लिए लिया गया था। जब तक यह वादी द्वारा स्थापित नहीं किया जाता है, मेरा विचार है कि वादी

प्रतिवादियों को सुरक्षा निष्पादित करने के लिए बुलाने वाले किसी भी अंतरिम आदेश की मांग करने का हकदार नहीं है।"

6. इसके विरूद्ध एक इंट्रा कोर्ट अपील दायर की गई थी, जिसमें उच्च न्यायालय की एक डिवीजन बेंच द्वारा आक्षेपित निर्णय के आधार पर यह राय दी गई:-विद्वान न्यायाधीश द्वारा इस बिन्दु पर विचारण नहीं किया गया कि तीसरे प्रतिवादी, जो साझेदारी विलेख दिनांक 1-4-1996 के अनुसार फर्म का भागीदार है, ने वचन पत्र निष्पादित किया और साझेदारी फर्म का खंड 10 व्यवसाय के उद्देश्य से एक भागीदार को तीसरे पक्ष से पैसे उधार लेने की शक्ति देता है। दूसरे प्रतिवादी ने एक पत्र दिया जो केवल व्यक्तिगत गारंटी के लिए है। इसलिए, विद्वान न्यायाधीश द्वारा दिए गए इस तर्क को खारिज नहीं किया जा सकता है कि चूंकि दूसरा प्रतिवादी भागीदार नहीं है, इसलिए पैसे का उधार साझेदारी के लाभ के लिए नहीं है। जब वादी द्वारा फर्म के नाम पर चेक दिया गया तो प्रथम दृष्टया यह मानना होगा कि यह साझेदारी फर्म की ओर से उधार लिया गया है। जब वादी द्वारा फर्म में पैसे का भुगतान विवाद में नहीं है तो किसी विशिष्ट आरोप के अभाव में मिलीभगत के संबंध में विद्वान वकील के तर्क को स्वीकार नहीं किया जा सकता कि राशि का भुगतान व्यक्तिगत रूप से प्रतिवादी 2, 3 और 8 को किया गया था, हालांकि चेक किसके नाम पर जारी किया गया

था, फ़र्म और वादी ने भी उनके साथ मिलीभगत की। क्या राशि का उपयोग फर्म के लिए किया गया या व्यक्तिगत रूप से प्रतिवादी 2, 3 और 8 द्वारा किया गया, यह साक्ष्य प्रस्तुत करने के पश्चात ही निर्धारित किया जा सकता है। प्रथम दृष्टया, हमने पाया कि चूंकि राशि का भुगतान फर्म के नाम पर किया गया था और प्रॉमिसरी नोट फर्म के भागीदारों द्वारा निष्पादित किए गए थे और साझेदारी दिनांकित 1-4-1996 के अलावा कोई अन्य साझेदारी विलेख न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया था, विद्वान न्यायाधीश द्वारा आवेदन को इस प्रकार अस्वीकार करना सही नहीं है, जैसे कि वादी का प्रथम दृष्टया कोई मामला ही नहीं बनता है। विद्वान न्यायाधीश ने कुर्की की आवश्यकता के बारे में कोई अन्य निष्कर्ष नहीं दिया है, लेकिन आवेदन को केवल इस आधार पर खारिज कर दिया है कि दूसरा प्रतिवादी फर्म का भागीदार नहीं है। उक्त निष्कर्ष पर वादी/उत्तरदायी द्वारा की गई अपील को स्वीकार कर लिया गया।

7. इस प्रकार, अपीलार्थी न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत हैं ।

8. अपीलार्थीओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री राममूर्ति हमें वादपत्र के साथ-साथ लिखित बयान के माध्यम से इस प्रकार का तर्क दिया गया कि उसके अवलोकन से ऐसा प्रतीत होता है कि वादी/उत्तरदायी से उक्त कथित ऋण प्राप्त करने में, प्रतिवादी संख्या 2, 3

और 8 ने एक प्रमुख भूमिका निभाई क्योंकि प्रतिवादी संख्या 2 को फर्म का प्रबंध भागीदार बताया गया था, जो कि वह नहीं था, और वास्तव में केवल उसका बेटा (प्रतिवादी संख्या 3) ही भागीदार था, कथित ऋण वादी द्वारा यह सुनिश्चित किए बिना दिया गया था कि उक्त फर्म के भागीदार कौन हैं।

9. न्यायालय का ध्यान साझेदारी अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों और विशेष रूप से धारा 2(ए) की ओर भी आकर्षित किया गया; धारा 18; धारा 19; धारा 22 और धारा 28 इस प्रस्ताव को आगे बढ़ाने के लिए हैं कि फर्म केवल तभी बाध्य होगी जब फर्म के किसी भागीदार द्वारा लेनदेन में प्रवेश किया जाएगा और वह भी उपरोक्त प्रावधानों में निहित सीमाओं के अधीन होगा।

10. वहीं दूसरी ओर, उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री अमित शर्मा ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया।

11. यह स्वीकार किया गया कि ऋण की राशि चेक द्वारा दी गई थी। उक्त चेक पार्टनरशिप फर्म के नाम से लिखा गया था। फिर से स्वीकार किया गया, प्रासंगिक समय पर अपीलार्थी उसके भागीदार थे, हालांकि विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष यह दिखाने का प्रयास किया गया था कि वे अब भागीदार नहीं रहे। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वे वर्ष

2001 में साझेदारी फर्म से सेवानिवृत्त हुए थे और पार्टियों के बीच लेनदेन वर्ष 2000 का है, प्रथम दृष्टया अपीलार्थीओं के दायित्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था।

12. निर्णय से पूर्व कुर्की के लिए आवेदन वादी द्वारा दायर किया गया था ताकि मुकदमे का निर्णय होने की स्थिति में उसके हितों की रक्षा की जा सके। ऐसी स्थिति में, अदालत सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXXVIII नियम 5 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करती है। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने केवल अपीलार्थीओं को इसके तहत निर्दिष्ट समय के भीतर सुरक्षा प्रदान करने का निर्देश दिया। यह निर्देश दिया गया कि ऐसा करने में विफल रहने की स्थिति में याचिका की अनुसूची में दूसरा आइटम संलग्न करने का आदेश जारी किया जाएगा।

13. अपीलार्थी, हमारी राय में, इससे गंभीर रूप से पूर्वाग्रहित नहीं हैं। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXXVIII नियम 5 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय न्यायालय को उस स्तर पर प्रथम दृष्टया राय बनाने की आवश्यकता होती है। इसमें पार्टियों द्वारा उठाए गए सभी तर्कों की सत्यता या अन्यथा पर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है। फर्म के नाम पर एक चेक जारी किया गया था। अपीलार्थी उसके भागीदार हैं। फर्म के एक भागीदार द्वारा एक प्रोनोट निष्पादित किया गया था। इस

प्रकार साझेदारी अधिनियम के तहत भी प्रथम दृष्टया वादी न केवल फर्म के विरुद्ध बल्कि उसके साझेदारों के विरुद्ध भी अपना दावा लागू कर सकता है।

14. धारा 2(ए); 18; 19; 22 और 28 जिस पर हमारा ध्यान आकर्षित किया गया है, अपीलार्थीओं की सहायता करने के बजाय प्रथम दृष्टया वादी-प्रतिवादी की सहायता करते हैं। मुकदमे की सुनवाई में प्रतिवादी संख्या 2, 3 और 8 के विरूद्ध विरचित किये गये आरोपों पर विचार किया जाना आवश्यक है। इस स्तर पर न्यायालय को केवल प्रथम दृष्टया राय बनाने की आवश्यकता है। वादी मुकदमे में शामिल राशि को ध्यान में रखते हुए अपने हित को सुरक्षित करने का हकदार है। उक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु इस प्रश्न के संबंध में विस्तृत चर्चा करना अधिक प्रासंगिक नहीं है कि प्रतिवादी नंबर 2 भागीदार था या नहीं ।

15. मामले के किसी भी दृष्टिकोण से, यदि अपीलार्थी सुरक्षा प्रदान करते हैं तो उन्हें गंभीर रूप से पूर्वाग्रह नहीं होगा, हमारी राय में, यह एक उपयुक्त मामला नहीं है जहां इस न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करना चाहिए।

16. उपरोक्त कारणों से यह अपील विफल हो जाती है और खारिज की जाती है। मूल्य के हिसाब से कोई आदेश नहीं किया जाता।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल **'सुवास'** की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अंकुर गुप्ता (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।